आखर हिंदी पत्रिका; e-ISSN-2583-0597 खंड 2/अंक 4/दिसंबर2022
Received:08/12/2022; Accepted:12/12/2022; Reviewed: 17/12/2022; Published:24/12/2022

गीतफ़रोश कविता की समीक्षा

- विजया अमृत
सहायक प्राध्यापिका
शारदा विलास कॉलेज , मैसूरु

विजया अमृत, गीतफ़रोश कविता की समीक्षा , आखर हिंदी पत्रिका, खंड2/अंक 4/दिसंबर 2022, (298-302)

आज हमारा संपूर्ण समाज हर क्षेत्र में व्यवसायिक बन चुका है ।लोग हर चीज़ को नफे - नुकसान की तराजू पर तौलने लगे हैं । समाज में अपनेपन,प्यार इन सब की जगह सिर्फ स्वार्थ बचा हुआ है। जब स्वार्थपरता अपनी विषरूपी जड़ें समाज के हर क्षेत्र में फैला चुका है तो साहित्य और साहित्यकार भी इससे कहाँ अछूते रह सकते थे? आज कई ऐसे साहित्यकार हैं जो अन्य व्यवसायों की तरह साहित्य -संस्कृति की दुनिया में भी नफे -नुकसान की तरह आचरण करने लगे हैं।

मूल शब्द - व्यावसायिक ,स्वार्थपरता ,साहित्य -संस्कृति ,नफा-नुकसान, मानसिकता, आचरण।

उद्देश्य - प्रस्तुत आलेख में प्रसिद्ध कवि भवानी प्रसाद मिश्र द्वारा रचित कविता 'गीतफरोश'में दर्शाए गए साहित्यकारों के व्यवसायिक आचरण से पाठकों को अवगत कराना ही इस आलेख का उद्देश्य है।

प्रस्तावना - फ़रोश शब्द उर्दू भाषा का शब्द है जिसका अर्थ होता है बिक्री करने वाला या बेचने वाला, व्यापारी, विक्रेता ।आज के लोलुप समाज में शायद ही ऐसा कोई ऐसा क्षेत्र है जिसमें व्यक्ति फ़रोश न बना हो।आज मनुष्य तो भावनाओं तक का फ़रोश बन चुका है । भावनाएँ उसके लिए व्यापार का माध्यम मात्र बनकर रह गई हैं।

आज हर व्यक्ति अपना व्यवहार नफ़े - नुकसान के अनुसार ही करता है। सामने वाले व्यक्ति को कितना सम्मान देना है या देना भी है या नहीं यह उससे होने वाले फायदे पर निर्भर करता है ।जब पूरा समाज ही स्वार्थपरता रूपी विष से विषाक्त हो चुका है तो साहित्य भी इससे अछूता नहीं रह सकता था। आज कई

साहित्यकार अपनी रचनाओं को वस्तुओं की तरफ बेच देते हैं पर प्रश्न यह उठता है कि क्या साहित्य जैसे मौलिक सृजन के क्षेत्र में खरीद-फरोख्त सही है? इन सभी प्रश्नों का उत्तर भवानी प्रसाद मिश्र ने बहुत ही व्यंग्यात्मक तरीके से अपनी कविता गीतफ़रोश में दिया है।

भवानी प्रसाद मिश्र नई कविता के दौर के कवि हैं । गीत फरोश कविता सर्वप्रथम अज्ञेय द्वारा संपादित दूसरे सप्तक 1951 में प्रकाशित हुई थी । आज के परिवेश में हर रिश्ता अपने फायदे की बात को लेकर शुरू होता है उसी पर खत्म हो जाता है । गीत फरोश कविता कवि की उस पीड़ा को प्रकट करती है जहां कभी उन्हें अपनी काव्यात्मकता को फिल्म जगत के पूंजीवादी समाज को बेचनी पड़ी थी , जिसकी तीखी आलोचना हुई । भवानी प्रसाद मिश्र ने इस कविता में यही बताया है कि हम तो गीत बेच रहे हैं पर कई लोग तो अपना ईमान बेच रहे हैं । कवि को अपनी बहन का विवाह करना था और उनके पास पैसे नहीं थे। मज़बूरीवश उन्होंने अपने गीत फिल्म जगत के लिए बेचे जिसका दुख उन्हें ताउम्र रहा । उनका मानना था कि यदि आप गीत लिखें और कोई उन्हें पसंद करके पैसे दे तो यह अलग बात है परंतु दुख तब होता है जब कोई आपको पैसे दे और कहे कि आप उनके पसंद के अनुसार गीत लिखे तो यह बहुत ही कष्टदायी होता है।

कवि ने अपनी व्यक्तिगत पीड़ा को ही बहुत ही व्यंग्यात्मक रूप से इस कविता में दर्शाया है। इस कविता की मूल संवेदना को निम्नलिखित बिंदुओं द्वारा स्पष्ट किया जा सकता है:

1. कवि की व्यक्तिगत पीड़ा का चित्रण - कविता में कवि ने अपनी व्यक्तिगत पीड़ा का चित्रण किया है । एक सामान्य विक्रेता की तरह उन्हें अपने गीतों को बेचना पड़ा और उस पर भी कष्टकर बात यह थी कि गीतों की रचना भी उन्हें मूल्य देने वाले लोगों की पसंद के अनुसार करनी पड़ी। इस पीड़ा को उन्होंने निम्नलिखित पंक्तियों द्वारा दर्शाया है -

"जी हाँ हुजूर,मैं गीत बेचता हूँ,

मैं तरह-तरह के गीत बेचता हूँ

मैं सभी किसिम के गीत बेचता हूं।"1

2. पूंजीवादी युग का चित्रण- इस कविता में कवि ने पूँजीवादी युग का चित्रण किया है । इस युग में हर एक वस्तु बाजार में बिकने के लिए उपलब्ध है सिर्फ़ सही दाम देने वाला खरीदार मिलना चाहिए । साहित्य भी इससे अछूता नहीं रह पाया है । साहित्यकार बाजार की माँग के अनुसार गीत लिखने को विवश है । उनकी बातों की सत्यता निम्नलिखित पंक्तियों द्वारा स्पष्ट होती है ।-

"जी माल देखिए दाम बताऊँगा ,

बेकाम नहीं है काम बताऊँगा ,

कुछ गीत लिखे हैं मस्ती में मैंने ,

कुछ गीत लिखे हैं पस्ती में मैंने,

ये गीत सख्त सरदर्द भुलाएगा,

यह गीत पिया को पास बुलाएगा।"2

3. व्यंग्यात्मकता - इस कविता में कवि ने वर्तमान समाज की दुर्दशा पर बहुत ही व्यंग्यात्मक तरीके से कड़ा प्रहार किया है । अपने स्वार्थ के लिए आज सभी अपना दीन- ईमान सब कुछ बेचने को तैयार हैं । उन्हें अपने स्वार्थ के आगे आज कुछ भी नहीं दिखता है। इस संदर्भ को निम्नलिखित पंक्तियों द्वारा समझा जा सकता है -

"जी पहले कुछ दिन शर्म लगी मुझको,

पर पीछे -पीछे अक्ल जगी मुझको

जी लोगों ने तो बेच दिये ईमान

जी आप ना हो सुनकर ज्यादा हैरान।" 3

4.समाज और साहित्य के बीच बढ़ती दूरियाँ - इस कविता में कवि ने भौतिकवादी युग में समाज और साहित्य के बीच बढ़ती दूरियों का वर्णन किया है । आज का समाज साहित्य से विमुख होता जा रहा है । आज समाज सिर्फ भौतिकवादी चीजों के पीछे भाग रहा है । निम्नलिखित पंक्तियों के द्वारा इस संदर्भ की तार्किकता स्पष्ट होती है-

"ना बुरा मानने की इसमें क्या बात,

मैं पास रखे हूँ कलम और दवात ,

इसमें से भाये नहीं ,नये लिख दूँ।

जी नये चाहिए नहीं, गये लिख दूँ।

इन दिनों कि दुहरा है कवि- धंधा,

है दोनों चीज़ें व्यस्त कलम- कंधा।" 4

5.मानवीय संवेदना का चित्रण - इस कविता में कवि ने मानवीय संवेदनाओं का चित्रण किया है। कवि के पास तरह- - तरह के गीत हैं। लोग इन्हें अपने सुख -दुख दोनों में सुन सकते हैं। कवि के पास सुबह- शाम के भी गीत हैं। निम्नलिखित पंक्तियों के माध्यम से इसे समझा जा सकता है -

"यह गीत सुबह का है गा कर देखें,

यह गीत गजब का है, ढाकर देखें,

यह गीत जरा सूने में लिखा था ,

यह गीत वहाँ पूने में लिखा था,

यह गीत पहाड़ी पर चढ़ जाता है ,

यह गीत बढ़ाये से बढ़ जाता है,

यह गीत भूख और प्यास भगाता है,

जी,यह मसान में भूत जगाता है।" 5

उपसंहार - अंततः हम कह सकते हैं कि इस कविता के माध्यम से कवि ने न सिर्फ अपनी व्यक्तिगत पीड़ा को दर्शाया है बल्कि उन्होंने बताया है कि समाज में आज सबकुछ किस तरह से बिकाऊ है । आज बाजार में हर चीज़ बिकने को तैयार है तो ऐसे में भला साहित्य भी कहाँ अछूता रह सकता था। स्थिति यह है कि साहित्यकार चाहे अपनी खुशी से या किसी मज़बूरी के कारण अपनी रचनाओं को बाजार में मूल्य के आधार पर बेचने को तैयार हैं। साहित्य के व्यवसायीकरण को इस कविता में व्यंग्यात्मक शैली में दर्शाया गया है।

संदर्भ ग्रंथ :-

1. दूसरा सप्तक, भारतीय ज्ञानपीठ, 1951

2. दूसरा सप्तक, भारतीय ज्ञानपीठ, 1951

3. दूसरा सप्तक, भारतीय ज्ञानपीठ, 1951

4. दूसरा सप्तक, भारतीय ज्ञानपीठ, 1951

5. दूसरा सप्तक, भारतीय ज्ञानपीठ, 1951

****